बुद्ध

की

शिक्षा का सारांश

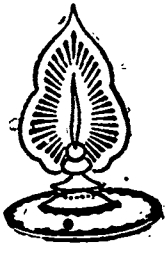

महर्षि शिवव्रतलालजी महाराज

बुद्ध
की
शिक्षा का सारांश
प्रश्न-उत्तर के रूप में

जिज्ञासू—संत और अवतार में क्या अन्तर है ?

शिव—'संत' ज्ञान और राजयोग की शिक्षा देते हैं और जो लोग उनको दुख और कष्ट भी देते हैं वह उनके अपराधों को दया के साथ क्षमा करते हैं। 'अवतार' मर्य्यादा के रखने वाले होते हैं इसलिये वह बहुधा नीति के अनुसार दण्ड भी देते हैं। "अवतार" मर्य्यादा पुरषोत्तम होते हैं और "संत" दयालु और कृपालु कहलाते हैं।

जिज्ञासू—आप विधि मिलाना भली भांति जानते हैं। दोनों शब्दों की परिभाषा की व्याख्या तो कर दी गई परन्तु हर जगह अवतारों ने दबाव के साथ कर्म्मकाण्ड का काम ही तो नहीं सिखाया। इसमें आपकी भूल है।

शिव—तब क्या सिखाया ?

जिज्ञासू—ज्ञान भी सिखाया है।

शिव—जैसे ?

जिज्ञासू—जैसे हमारे नवें अवतार **बुद्ध भगवान** ने केवल ज्ञान की और शुद्ध ज्ञान की शिक्षा दी है और ईश्वर तक का खण्डन किया है। वह बड़े दयालु और कृपालु थे। वह औरों के सदृश तो मार धाड़ करने वाले नहीं थे।

शिव—यह सच है परन्तु यहाँ **बुद्धदेव** ने भी विशेष प्रकार की मर्य्यादा की शिक्षा दी है। तुम उनकी शिक्षा और उनके सिद्धान्त को नहीं जानते, इसलिये ऐसा समझ रहे हो। **बुद्ध** ने कहीं भी ईश्वर का खण्डन नहीं किया, न नास्तिकपने की शिक्षा दी है। उन्होंने तो केवल कर्म्म, निष्काम-कर्म्म, शुद्ध और पवित्र कर्म्म करने की शिक्षा दी है और उसी को ज्ञान के प्राप्त करने का मुख्य साधन बतलाया है।

जिज्ञासु—**बुद्ध** ने मर्य्यादा को तो ज्यों का त्यों रहने दिया। यह सच है अर्थात् सच होगा परन्तु और अवतारों के समान उनके काम नहीं हुये हैं।

शिव—जैसे ?

जिज्ञासु—जैसे कड़ाई न करना, दबाव न डालना किन्तु प्रेम भाव से उपदेश देना।

शिव—अवतारों के लिये यह एक दम आवश्यक तो नहीं है कि वह बलात्कार काम किया करें। हाँ, उनको कभी कभी ऐसा करना पड़ा है। जिस समय जिस प्रकार की मर्य्यादा स्थापित रखने अर्थात् अपने जीवन व्यवहार को दिखाकर मर्य्यादा चलाने की आवश्यकता हुई, उन्होंने उसी प्रकार बलात्कार काम किया है और एक के काम कभी दूसरे से नहीं मिलते।

जिज्ञासु—जैसे ?

शिव—जैसे **बामन** ने भिक्षा माँगी, **परशुराम** ने क्षत्रियों का नाश किया, **श्री रामचंद्र** जी ने लङ्का पर सेना के साथ चढ़ाई की और दैत्य रावण को मार दिया। **कृष्ण** ने अकेले कंस को मारा। **बुद्ध** ने साधुओं का भेष धारण किया। इन

सबके ढङ्ग भिन्न भिन्न थे परन्तु सन्तों के ढङ्ग और सिद्धान्त में भिन्नता नहीं होती। वह विशेषता और अधिकता के साथ भक्ति भाव ही का प्रचार करते हैं।

जिज्ञासू—अवतारों के काम में भिन्नता और संतों के व्यवहार में एकता होने का कारण क्या है।

शिव—अवतारों का मन्तव्य प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग के प्रबन्ध को ठीक रखना है जिसमें प्राकृतिक नियम में त्रुटि न आने पाये। जो लोग इस नियम का उलङ्घन करते हैं उनको राह पर किसी न किसी प्रकार लगाना या यदि वह सुधार होने की अवस्था से बाहर निकल गये हैं तो उन्हें नष्ट कर देना है। "संत" या "वली" इसके विरुद्ध केवल निवृत्ति मार्ग का उपदेश देते हैं। इसलिये उनके काम में एकता है।

जिज्ञासू—परन्तु बुद्ध भगवान ने भी तो केवल निवृत्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग की शिक्षा दी है।

शिव—फिर हुआ क्या?

जिज्ञासू—फिर वह भी 'संत' हैं। वह 'अवतार' नहीं हैं और वह प्रवृत्ति के विरुद्ध हैं।

शिव—इसमें तुम्हारी थोड़ी सी भूल है। बुद्ध ने प्रवृत्ति के विरुद्ध कभी कुछ नहीं कहा है किन्तु सोसाइटी की सामाजिक अवस्था का सुधार किया है। यह मर्य्यादा है और साथ ही निवृत्ति का मार्ग भी दिखाया है। यह कहाँ से तुमने सुना कि वह सामाजिक धर्म्म के विरुद्ध थे?

जिज्ञासू—उन्होंने वर्णाश्रम के विरुद्ध शिक्षा दी। ईश्वर का खण्डन किया। वेदों के महत्व को धक्का पहुंचाया।

शिव—इसमें तुम्हारी भूल है और तुम ने बुद्ध धर्म्म के सिद्धान्त का भली भाँति अवलोकन नहीं किया है इसलिये ऐसा कहते हो। बुद्ध यदि ईश्वर का खण्डन करते होते तो हम हिन्दू उनको ईश्वर का अवतार कब मानते ? न ही बुद्ध ने वर्णाश्रम और वेदों के विरुद्ध प्रचार किया है। यह एक दम भूल है। उन्होंने वेद और वर्णाश्रम के प्रश्न तक को कभी नहीं उठाया और ईश्वर या ब्रह्म के विषय को तो एक दम छोड़ ही दिया है। केवल शुभकर्म्म, शुद्ध जीवन और विचार के साथ काम करने का उपदेश देते हुये उन्हीं के सिलसिले में निर्वाण पद प्राप्त करने की शिक्षा दी है।

जिज्ञासू—परन्तु उन्होंने ईश्वर के विषय को क्यों छोड़ दिया ?

शिव—वह अकथ अपार विषय है। इसे विशेष मुख्यता देने से भिन्नता के बढ़ जाने का भय था। कोई कहता—"ईश्वर है," कोई कहता—"ईश्वर नहीं है," और व्यर्थ ही वाद-विवाद बढ़ जाता जिसमें पड़ कर परमार्थ की कमाई एक से भी न होती और सब वाचक ज्ञानी हो जाते, जैसा कि आज कल ईश्वर के मानने वालों और ईश्वर के न मानने वालों की दशा है। दोनों एक जैसे हैं और परमार्थ से कोरे हैं। इसके विरुद्ध बुद्ध ने मध्य मार्ग ग्रहण किया। न यह कहा कि "ईश्वर है" और न यह कहा कि "ईश्वर नहीं है", क्योंकि इस कहने और न कहने का कोई प्रयोजन नहीं था। उन्होंने (१) दुख के होने (२) दुख के कारण (३) दुख के मेटने और (४) निर्वाण पद के प्राप्त करने की शिक्षा दी और अष्टाङ्ग योग सिखाया जिसके करने से किसी दिन यह प्रश्न आप बिना

बताये और समझाये हुये समझ में आ जाता है और वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं होती।

जिज्ञासु—बुद्ध ने यह अनुचित शिक्षा दी।

शिव—वह कैसे?

जिज्ञासु—ईश्वर के विचार और ध्यान को लोगों के हृदय-स्थल में ठहरने नहीं दिया और वास्तव में सब को नास्तिक बना दिया।

शिव—असत्य! और एक दम असत्य! यदि तुम कहते कि गुप्त रीति से उन्होंने सब को आस्तिक और सच्चा आस्तिक बना दिया तो बहुत ठीक होता।

जिज्ञासु—यह कैसे?

शिव—जैसे बुद्ध भगवान ने शिक्षा दी है कि तुम शुद्धता के विचार को आँखों के सामने रक्खो। क्या ईश्वर शुद्ध नहीं है? बुद्ध भगवान ने बताया है कि तुम बुद्धि को काम में लाते हुये उसी की बतलाई हुई राह पर चलो। क्या ईश्वर बुद्ध नहीं है? बुद्ध भगवान ने सिखाया है कि तुम शुद्ध होकर, मुक्ति पद की प्राप्ति का यत्न करो। क्या ईश्वर मुक्त नहीं है? शुद्ध, बुद्ध, मुक्त यही तो ईश्वर के गुण हैं। लोग इन पर व्यर्थ वाद विवाद करके अपना और दूसरों का समय नष्ट करते हैं। उस समय में बुद्ध के शिष्य इनके आदर्श को आँखों के सामने रखकर शुद्ध, बुद्ध और मुक्त होने का प्रयत्न करते थे। अब तुम्हीं न्याय करो कि यह अच्छे या वह अच्छे! नाम लिया तो क्या? न लिया तो क्या? पतिव्रता स्त्री अपने पति का नाम नहीं लेती परन्तु सबसे अधिक उसकी भक्ति का

आनन्द उसी को मिलता है ! दूसरे चिल्ला चिल्लाकर नाम लेते हैं और उसके हृदय में वह जगह नहीं पाते जो उसकी स्त्री को मिलती है। इस प्रकार बुद्ध धर्म्म एक दम व्यवहारिक धर्म था। वाचक ज्ञान का मार्ग नहीं था।

जिज्ञासु—क्या कहना है ? यह बात तो आपने विचित्र बताई। हम एक दम भूले हुये थे।

शिव—तो अब न भूलना। सँभल कर रहना। बुद्ध नास्तिक नहीं हैं। वह ईश्वर के अवतार हैं। ईश्वर का अवतार नास्तिक कैसे होने लगा ? भेद केवल इतना है कि एक मनुष्य बिना समझे बूझे नाम ले ले कर चिल्लाता है और कुछ हाथ नहीं आता और दूसरा मनुष्य गुरु के सङ्केत को समझकर रूप को साक्षात्कार करके उसी का हो रहता है। नाम और रूप का यह जगत् है। किसी को कोई वस्तु नाम लेने से प्राप्त होती है, किसी को रूप के देखने से। रूप का देखना विशेष साक्षात्कार कहलाता है। बुद्ध भगवान के शिष्य नाम लेने के बदले साक्षात्कार करने ही को अच्छा समझते थे। यह भेद है

जिज्ञासु—तो यह बताइये आप किसके पक्षपाती हैं ? नाम के या रूप के ?

शिव—तुम्हारा यह प्रश्न व्यर्थ है। जब तुम "वली", "नबी" के विषय में पूछने आये थे तो मेरे निज विश्वास के प्रश्न को परे उठा रखते तो अच्छा होता, परन्तु तुमने प्रश्न किया है उसका उत्तर कुछ न कुछ देना ही पड़ेगा। हम नाम और रूप दोनों के प्रेमी हैं। हमारे पन्थ में नाम का सुमिरन भजन और रूप का ध्यान दोनों ही हैं। हमारे यहां "शब्द"

और "प्रकाश" दोनों साथ साथ चलते हैं। प्रकाश रूप है और शब्द नाम है। यह इन दोनों की मुख्यता है।

जिज्ञासु—तब तो आप का सिद्धान्त बुद्ध देव के सिद्धान्त से भिन्न ठहरा ?

शिव—यह तुम कहते क्या हो ? हमने यह कब कहा कि हम बुद्ध धर्म्म के अनुयायी हैं ?

जिज्ञासु—जब आप उसका इतना पक्ष करते हैं तो अनुयायी होने में कसर क्या रही ?

शिव—हम केवल न्याय की बात कहते हैं। जो हमको सच प्रतीत होता है उसको न तो हम छुपाना चाहते हैं न उसके विरुद्ध हठ धर्म्मी का भाव आता है।

जिज्ञासु—तो फिर क्या जो बुद्ध धर्म्म के अनुयायी नहीं हैं उनकी मुक्ति न होगी ?

शिव—यह हमने कब कहा ? मुक्ति का अधिकार सब को बराबर है।

जिज्ञासु—मैं तो समझता हूं जो ईश्वर को नहीं मानता या उस पर विशेष ध्यान नहीं देता वह बुरा है।

शिव—हम भी ऐसा ही मानते हैं। तुम सच कह रहे हो।

जिज्ञासु—परन्तु आप तो अभी कह चुके हैं कि बुद्ध भगवान ने जान बूझ कर ईश्वर के विषय पर ध्यान नहीं दिया; न यह कहा कि "ईश्वर" है और न यह कहा कि "ईश्वर" नहीं है।

शिव—हां ! यह तो हमने अवश्य कहा है।

जिज्ञासु—फिर परिणाम क्या हुआ ?

शिव—परिणाम यह हुआ कि **बुद्ध भगवान** ने प्रेमियों के हाथ में मिठाई देकर कहा कि इसको चखो और यह नहीं बताया और न बताने की आवश्यकता समझी कि संस्कृत में इसको यह और अरबी में यह और फ़ारसी में यह कहते हैं। केवल इतना भेद है और तुम यदि हमारी बात समझ जाते तो फिर वादविवाद न करते।

जिज्ञासु—तो फिर यह बताइये कि **बुद्ध धर्म्म** ने किस प्रकार ईश्वर का साक्षात्कार कराया ?

शिव—इसका उत्तर तो हमने दे दिया। अब तुम व्यर्थ उलझते हो। हमारी बातों पर विचार करो और तुम्हें बोध हो जायेगा और यदि तुम्हारा संशय निवारण नहीं होता तो हमने भी कुछ इसका ठेका नहीं ले रक्खा है। अपनी अपनी समझ ! और अपना अपना विचार !

जिज्ञासु—महाराज ! बुरा न मानिये। मैं पूछना कुछ चाहता हूँ परन्तु अपने भाव को उचित शब्दों में प्रकट नहीं कर सकता। आप का उत्तर ठीक है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं परन्तु मैं अपने मन को क्या करूँ ? वह कुछ जानना चाहता है परन्तु स्पष्ट शब्दों में अपने विचार के प्रकट करने में असमर्थ है।

शिव—तो दम ले लो, सोच लो, समझ लो। जल्दी क्यों करते हो ?

जिज्ञासु—**बुद्ध भगवान** ने ईश्वर की आवश्यकता को कैसे दूर किया क्योंकि चाहे थोड़े से लोग नास्तिक हो जाँय परन्तु बहुत से लोग तो ऐसे नहीं हो सकते ? मनुष्य में

स्वभावतः हीं ईश्वर के जानने, बूझने, समझने और सोचने का संस्कार है।

शिव—यह तुम्हारा कहना ही कहना है। मनुष्य के सारे विचार, उसकी शिक्षा देश काल और वस्तु के आधीन हैं। यदि ईश्वर का जानना ही सब कुछ होता तो थोड़े ही से मनुष्य उसके लिये निर्दिष्ट न होते। स्वभाव तो उसको कहते हैं जो सब में साधारणता के साथ हो परन्तु तुम देखते हो कि सभ्य और असभ्य मनुष्य के विचार में कितना भेद होता है। इसलिये हम कैसे मानें की ईश्वर के विषय में सब का एक भाव है? ईश्वर का विषय भी सत् के साक्षात्कार की केवल एक मध्य कड़ी है और इसलिये तुमको भी इस पर व्यर्थ अड़ने की आवश्यकता क्या है? क्या यह कम है कि तुम आप ईश्वर वादी हो? दूसरों पर बलात्कार प्रभाव डालने की क्या आवश्यकता है? बुद्ध के शिष्यों में करोड़ों ऐसे मिलते हैं जो इधर ध्यान तक नहीं देते। ऐसी दशा में ईश्वर के विषय में सबका एक भाव कैसे हो सकता है?

जिज्ञासु—परन्तु अभी आप ने शुद्ध, बुद्ध, मुक्त का उदाहरण देकर उनको आस्तिक बताया है।

शिव—यह सच है। शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, निस्सन्देह स्वाभाविक गुण हैं और यदि तुम बौद्धों के सिद्धान्त को मानते हो तो फिर तुमको किसी और प्रश्न करने की आवश्यकता नहीं रहती। शुद्ध कहते हैं पवित्र को—हर मनुष्य पवित्र रहने का स्वाभाविक प्रेमी है। बुद्ध कहते हैं ज्ञान को—प्रत्येक मनुष्य संसार में ज्ञानी और बुद्धिमान होने की इच्छा रखता है। मुक्त कहते हैं निर्बन्ध को—प्रत्येक मनुष्य दुख से, मृत्यु से

और अप्रिय दशा से बचना चाहता है। इन तीन बातों की प्रबल इच्छा प्रत्येक मनुष्य में स्वाभाविक पाई जाती है। कोई अशुद्ध या अपवित्र नहीं रहना चाहता क्योंकि अपवित्रता में दुख है। जहाँ मिलौनी, द्वैत भाव या वियोग है वहाँ ही अशुद्धता रहेगी। जहाँ एकता, अद्वैत भाव और संयोग या मिलाप है वहीं आनन्द, शान्ति और सुख होंगे। आनन्दित रहने, और आनन्दित होने का विचार मनुष्य में स्वाभाविक है। वह स्वाभाविक आनन्द है और यही आनन्द दूसरे अर्थ में शुद्धता और पवित्रता है। बुद्ध का कथन है, "दुख से बचकर ऐसी अवस्था में आओ जो आनन्द ही आनन्द की अवस्था है।" इसी प्रकार संसार में प्रत्येक मनुष्य मूढ़, मूर्ख और अज्ञानी बनने से बचना चाहता है। अज्ञानता लज्जा की बात है। इसलिये कभी कभी लोग न जानते हुये भी अपने को मूर्ख और अज्ञानी कहने और कहलवाने से झिझकते हैं। बुद्ध का अर्थ है 'ज्ञान'। बुद्ध का कथन है—"अज्ञान से बचकर ज्ञानपद को प्राप्त करो।" यही ज्ञान चित् कहलाता है। यह निस्सन्देह मनुष्य में स्वाभाविक है। मुक्त कहते हैं निर्बन्ध को। स्वभावतः प्रत्येक मनुष्य स्वाभाविक निर्धनता से, मृत्यु से और अप्रिय अवस्था से बचना चाहता है। यह बात उसमें स्वाभाविक है। बुद्ध देव का कथन है, "जहां धन है वहाँ ही निर्धनता भी है। जहाँ आरोग्यता है वहाँ ही रोग भी है। जहाँ सुख है वहाँ ही दुख भी है। यदि एक की इच्छा करोगे तो दूसरी भी उसके साथ रहेगी, क्योंकि उनमें परस्पर सम्बन्ध है। इसलिये उनकी इच्छा को परे हटाओ, उनकी बासना को मेट दो और मुक्त हो जाओ।" यही मुक्त होना सच्चे अर्थ में सत् होना है। सत् ही सच्ची वस्तु है। इसलिये जिसको सच्चिदानन्द कहते हैं

उसका भाव तो मनुष्य में अवश्य है परन्तु जिस दृष्टि से तुम ईश्वर का विचार कर रहे हो वह स्वाभाविक नहीं है किन्तु शिक्षा, सङ्गत और देश काल और वस्तु के प्रभाव का परिणाम है। यह अब तुमने अवश्य समझ लिया होगा। इस समझ को लेकर बात चीत करो तब हम उत्तर दें।

जिज्ञासु—जिसको आप सच्चिदानन्द कहते हैं उसी को हम ईश्वर कहते हैं और उसी का भाव हम सब में स्वाभाविक है।

शिव—तब तो तुम भी बुद्ध ठहरे। फिर झगड़ा किस बात का? सच्चिदानन्द वास्तव में ईश्वर का आदर्श है जिसको लक्ष करके हम सब उस तक पहुंचना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में ईश्वर को अपने से बाहिर न जानकर अपने ही भीतर सत् चित् और आनन्द का प्रकट करना और इस युक्ति से शुद्ध बुद्ध और मुक्त हो जाना बुद्ध धर्म्म की शिक्षा है। शिक्षा में भेद हो और हुआ करे। इससे कोई हानि नहीं होती और ऐसा होना भी चाहिये, परन्तु बिना समझे बूझे किसी बड़े आत्म शिक्षक के विषय में अनुचित शब्द का प्रयोग करना सभ्यता के विरुद्ध है।

जिज्ञासु—सारी सभ्यता की जड़ में ईश्वर की भक्ति है। यदि ईश्वर नहीं है तो फिर सारी सभ्यता व्यर्थ है।

शिव—यह सच है और वह जड़ सच्चिदानन्द ही है। जो मनुष्य सत होना चाहेगा वह किसी को भी जान से न मारेगा। जो आनन्द होना चाहेगा वह किसी को दुख न देगा। जो आप ज्ञानी होना चाहेगा वह किसी को अज्ञानता न सिखायेगा, न वह किसी की आँख में पट्टी बाँध कर उसको मूर्ख और अज्ञानी रखना उचित समझेगा। यह सभ्यता का

सर्वोत्तम सिद्धान्त है और जो सच्चिदानन्द के आदर्श पर चलते हैं वह इस नियम को नहीं तोड़ते:—"अहिंसा परमो धर्म्मः।" वही बुद्ध धर्म्म की शिक्षा है और यदि तुम ईश्वर को सच्चिदानन्द मानते हो और आप भी सच्चिदानन्द होने की लालसा रखते हो तो व्यर्थ ही बुद्ध को निरीश्वर वादी और नास्तिक न कहोगे। सच्चिदानन्द ही एक ऐसा उत्तम आदर्श है जो सच्चे ईश्वर के भाव पूर्ण रूप से अपने अन्दर रखता है।

जिज्ञासू—आपने मुँह बन्द कर दिया और बुरे ढङ्ग से मुँह बन्द कर दिया। मेरा वह प्रश्न ज्यों का त्यों रह गया कि ईश्वर की आवश्यकता को बुद्धदेव ने किस प्रकार दूर किया। यदि सच्चिदानन्द और सत् चित आनन्द का आदर्श ही आपके कथनानुसार ईश्वर है तो बुद्ध भगवान ने उसको पूरा कैसे किया?

शिव—तुम कुछ और भी कहना चाहते हो उसको कह लो, तब मैं उत्तर दूं। यों तो मैंने उत्तर दे दिया है कि पवित्र जीवन, निस्वार्थ जीवन, ज्ञान, विवेक, वैराग और सच्चे तप का जीवन व्यतीत करने ही में बुद्धदेव ने सच्चिदानन्द की प्राप्ति की शिक्षा दी है और उसकी पूरी पूरी पूर्ति का नाम "निर्वाण पद" रक्खा है।

जिज्ञासू—मनुष्य स्वाभाविक रूप से इस बात की इच्छा रखता है कि अपने आदर्श का दर्शन इन आँखों से भी करे अर्थात् वह केवल निर्गुणी न हो किन्तु सगुणी भी हो क्योंकि जब तक हम अपने इष्ट को इन खुली आँखों से नहीं देखते और उसका आदर्श हमारी आँखों के सामने नहीं रहता तब तक हम

किसी प्रकार के जीवन व्यवहार को स्वीकार नहीं करते। यही कारण है कि हम हिन्दुओं में अवतार पूजा की निष्ठा उत्पन्न हो गई है।

शिव—हाँ! यह कहो, अब जाकर तुम ठिकाने आये। सुनो, इस बात में तो बुद्ध भगवान से बढ़कर और किसी ने क्या शिक्षा दी होगी! जहाँ वह निर्गुण दृष्टि से निर्वाण पद के प्राप्त होने की आशा दिलाते हैं साथ ही सगुण दृष्टि से अपना आप उदाहरण, अपने रूप का उदाहरण अपने वैराग और जप तप का उदाहरण और आदर्श दिखलाते हुये उपदेश देते हैं कि तुम उनके अनुयायी बनो। जिस प्रकार बुद्ध ने पवित्र जीवन व्यतीत करके बुद्ध पदवी को प्राप्त किया है तुम भी परिश्रम करके बुद्ध हो जाओ क्योंकि प्रत्येक मनुष्य चाहे वह कुछ ही क्यों न हो अपने अन्दर बुद्ध होने का दबा हुआ संस्कार रखता है! बुद्ध धर्म्म में निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार की उपासनायें है। हाँ, यहाँ वह भ्रम नहीं है जो और पन्थों में है। अब तुमने समझ लिया होगा और आशा है कि अब अधिक प्रश्न न करोगे।

जिज्ञासु—यहाँ तक तो मैं समझ गया परन्तु जिन प्रश्नों को लेकर मैंने यह बात छेड़ी थी वह तो अभी खटाई में पड़ी हुई है।

शिव—तो उसे भी कह डालिये।

जिज्ञासु—क्या आप बुद्ध धर्म्म के अनुयायी हैं?

शिव—हाँ और नहीं।

जिज्ञासु—दोनों बातें कैसे सम्भव हो सकती हैं?